गँवई जीवन की मिठास और लोक जीवन से सम्पृक्त हैं,रमई काका की कविताएँ

[1]पवन कुमार रावत

शोध सारांश

अवधी कविता के **शिखर पुरुष** चन्द्रभूशण त्रिवेदी उर्फ 'रमई काका' साहित्य जगत में अपनी **विशिष्ट** रचनात्मक **शैली** के कारण पृथक् पंक्ति में दिखायी पड़ते हैं। ठेठ अवधी में उन्होंने अवध के ग्राम्यांचल की समस्याओं को उठाकर अपने जनकवि होने के दायित्व को भली-भाँति निभाया है। रमई काका एक जमीनी साहित्यकार हैं। उनकी रचनाओं में कृशि एवं कृशक संस्कृति से जुड़े प्र-न हैं। किसानों का अभाव, उनकी समस्या, संघर्श व चुनौतियों के प्रति एक गंभीर सामाजिक-आर्थिक चिन्तन देखने को मिलता है। उनकी कविता में लोकजीवन और लोकसंस्कृति से गहरा जुड़ाव है। इसलिए उनकी कविता लोक मन के बहुत निकट है। उनकी कविता में प्रकृति है। प्रेम है। गँवई जीवन का भोलापन है। तो वहीं जीवन के विविध राग-रंग समाहित हैं। कहीं श्रम सौन्दर्य है, तो कहीं व्यंग्य का पैनापन है। करूणा, **आशा**, प्रेम, सामाजिक समरसता, आत्मबल और वि-वास से भरी उनकी कविताएँ जिन्दगी के रे-ो-रे-ो को समझने की कला सिखलाती हैं। रमई काका की कविताएँ अनूठी हैं। तो जीवन की मिठास और लोक जीवन व संस्कृति से जुड़ाव के कारण।

मूल शब्द : लोक जीवन, ग्रामीण संस्कृति, सरोकार, श्रम सौन्दर्य, किसान संवेदना, जीवन मूल्य।

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कमला नेहरू भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान संस्थान सुलतानपुर, उ0प्र0 - 228118
सम्पर्क-9450080870, 9580968434, Email: jrfpawan2012@gmail.com

प्रस्तावना

आधुनिक अवधी कविता के इतिहास पर नजर डालें तो हम एक ऐसे रचनाकार को अपने सामने पाते हैं जिन्होंने अवधी के उन्नयन के लिए सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। अवधी की सहजता, सरलता, अपनत्व और मिठास को लोक जीवन से जोड़कर उसे अपनी रचना का हिस्सा बनाया। आधुनिक अवधी कविता के प्रतिमान चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' उपनाम से साहित्य जगत् में विख्यात थे। इनका जनम उ0प्र0 के उन्नाव जिले के 'रावतपुर' नामक गाँव में 2 फरवरी, 1915 ई0 को हुआ था। इनके पिता पं0 वृन्दावन त्रिवेदी सेना में कार्यरत थे। रमई काका लम्बे समय तक आकाशवाणी और दूरदर्शन से जुड़े रहे। इन आधुनिक संचार माध्यमों के द्वारा रमई काका ने अवधी के माधुर्य से लोक में मिठास और सौहार्द को स्थापित करने का यत्न किया। गँवई जीवन की बनावट, उसका सोंधापन, उसकी खुशबू, उसकी आत्मीयता, उसमें रचे बसे लोक जीवन, लोक संस्कृति, जीवन मूल्य, श्रम सौन्दर्य तथा मानवीय राग जैसे मूल्यों

को अपनी कविता में पिरोकर अवधी और ग्राम्य जीवन की विलक्षणता व संवेदना को समृद्ध किया है। अवधी के इस शब्द शिल्पी का निधन 19 मई 1982 ई0 को हुआ।

रमई काका का रचना संसार अत्यन्त समृद्ध है। इनके कुल चार काव्य संग्रह प्रकाशित हुए। 'बौछार', 'भिनसार', 'गुलछर्रा' और 'फुहार' प्रमुख हैं। इनकी रचनाएँ अनुभूति और अभिव्यक्ति के पक्ष पर सक्रिय व सशक्त हैं। यह तीस प्रांजल कविताओं का संचयन है। यह संग्रह वर्ष 1944 ई0 में प्रकाशित हुआ। इसमें संकलित कविताएँ ग्रामीण एवं प्राकृतिक परिवेश से सरोकार रखती हैं। इस संग्रह की प्रमुख कविताओं में 'बौछार', 'कचेहरी', 'बरखोज', 'अनमोल बियाहु', 'बुढऊ का बियाहु', 'ध्वाखा' आदि प्रमुख हैं। ये कविताएँ बैसवाड़ी अवधी की कविताएँ हैं।

'भिनसार' बयालीस अवधी कविताओं का संग्रह है। इसका प्रकाशन वर्ष 1946ई0 है। इस संग्रह की कविताएँ समाज की विसंगतियों से टकराती हैं। उनका प्रतिरोध करती हैं। इसमें रमई काका के हास्य-व्यंग्य के चुटकीले अंदाज का तेवर है।

'फुहार' काव्य संग्रह वर्ष 1956 ई0 में प्रकाशित हुआ। इसमें छत्तीस कविताएँ संकलित हैं। इस संग्रह की कविताओं में वस्तु वैविध्य है। इसमें अन्धविश्वास, रूढ़ियाँ, सामाजिक विसंगति, कुरीति, राजनीतिक-सामाजिक अव्यवस्था पर चोट है। यह कृति उ0प्र0 हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत भी हुई। इस संग्रह की कविताएँ अपने हास्य-व्यंग्य की शैली के कारण पाठकों के भीतर एक आकर्षण व चिन्तन के लिए कसमसाहट पैदा करती हैं।

'गुलछर्रा' छत्तीस कविताओं का संग्रह है। इसमें रमई काका की धारदार व्यंग्य शैली प्रयुक्त है। इस संग्रह की कविताएँ समकालीन समस्याओं पर कटाक्ष पूरे आवेग के साथ करती हैं।

'माटी के गीत' रचना ग्राम्य गीतों का संकलन है। इसमें विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले ग्रामीण संवेदना से युक्त गीतों का संचयन है। देवी गीत, बधाई गीत, सोहर गीत आदि।

'बहिरे बाबा' रमई काका का एक प्रमुख रेडियो नाटक है। इस प्रहसन नाटक के जरिए रमई काका ने विशेष प्रसिद्धि अर्जित की है।

रमई काका जन-जन के रचनाकार ठहरते हैं। वे अपनी कविता में आम आदमी के सुख-दुःख को तरजीह देते हैं। इस सन्दर्भ में डॉ0 रामशंकर त्रिपाठी का विचार है- ''रमई काका आधुनिक युग के अवधी काव्य के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं। बैसवाड़ी अवधी का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत कर गाँव को कविता के निकट न लाकर कविता को गाँव के निकट लाने वाले सफल हस्ताक्षर का नाम है रमई काका। उनकी चुटकियाँ मर्म को छूने वाली हैं, उनके भाव वैविध्यपूर्ण हैं और उनका शिल्प अनूठा है। धरती के काका जनकवि हैं, लोक कवि हैं।''[1]

रमई काका ग्राम्य संवेदना के कवि हैं। इनकी कविताओं में ग्रामीण परिवेश के प्रति अनुराग व ममत्व का भाव झलकता है। गाँव की मिट्टी, हवा, पानी, पक्षी, खेत-खलिहान, बाग-बगीचे पूरी जीवंतता के साथ उनकी कविता में आते

हैं। रमई काका अपने पुरखों की विरासत और माटी के प्रति कृतज्ञ हैं क्योंकि इसी माटी में उनका व्यक्तित्त्व निर्मित हुआ है। उन्हें संस्कार प्राप्त हुआ। 'हमरे दादा का खेतु आय, हमका कइसे न पियार होय' कविता में वे कहते हैं-

''यहि खेतवा की माटी मइहाँ हम रेंगेन है बइयाँ-बइयाँ

यहि खेतवा की धरती मइहाँ हम चलबु सीख पइयाँ-पइयाँ

मइया के अँचरा दूधु पियाई खेतवा की निमछइयाँ मो

औ यही ख्यात की माटी मा लोटेन पोटेन लरिकइयाँ मा।''[2]

रमई काका एक किसान कवि हैं। इस कारणवश वे किसानों के दुःख, दर्द व तकलीफ को अच्छी तरह जानते हैं। किसान अपने श्रम से खेतों में फसलें उगाता है। वह अपने पसीने की बूँदों से खेत को सींचता है। हर मौसम की चोट सहकर भी वह देश के आर्थिक उत्पादन को मजबूत व समृद्ध करने का प्रयत्न करता है। उसके इस कार्य में जो लौह उपकरण साधन बनते हैं। वे हल, खुरपी, हैं। इसी से वे अपने खेतों में जीवन उगाता है। अतः जो दूसरों का पेट भरने के लिए दिन-रात श्रम करता है उसके पसीने की कीमत अनमोल है। 'गाँव है हमका बहुत पियार'' कविता में वे वे कहते हैं-

खुरपिया हरबर खेतु निराय, फसल के बोरिन देति निकारि।

पसीना मनई का अनमोल, देत ढ्यालन माँ जीवनु डारि।''[3]

किसान देश का अन्नदाता है। वह हमारा भाग्य विधाता है। रक्त, माँस और हाड़ से बना वह एक ऐसा प्राणी है जो अपने अदम्य साहस, पौरुष व लगनशीलता से भारत के मानचित्र में हरियाली और समृद्धि के रंग भरता है। वह माटी को सोना और खेतों में जीवन के अंकुर पैदा करने की कला जानता है। 'धरती हमारि' कविता में वे कहते हैं-

हम अपनी छाती के बल ते धरती माँ फारू चलाइत है।

माटी के नान्हें कन-कन मा हमही सोना उपजाइत है।।

अपने लोनखरे पसीना ते रयातौ मा ख्यात बनावा हम।

मुरदा माटी जिन्दा होइगै, जहँ लोखर अपन छुवावा हम।''[4]

किसान के लिए उसकी पहली प्राथमिकता उसका खेत और उसकी जमीन है। यही उसके जीवन की आधारशिला है। रमई काका अपनी कविता के माध्यम से किसान जीवन का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हैं। भारत के ग्रामीण परिवेश के जनजीवन से हमारा साक्षात्कार कराते हैं। किसान धरती को अपनी माँ के रूप में देखता है। उसकी सेवा करना अपना धर्म समझता है। इसलिए वे कहते हैं-

"हमरे तरवन कै खाल घिसी, औ रकतु पसीना एक कीन।

धरती मइया की सेवा मा, हम तपसिन का अस भेसु कीन।।"[5]

रमई काका किसान को किसी तपस्वी से कम नहीं मानते हैं। उसका तप समाज और राष्ट्र के हित व मंगलभाव से जुड़ा है। इस तपस्वी के रूप से लोक को अवगत कराना भी उनका एक मिशन है।

खेत-खलिहान हमारी परम्परा और विरासत के प्रतीक हैं। ग्रामीण संस्कृति के आधार हैं। जो हमें अपने पुरखों से प्राप्त हुए हैं। उसमें हमारे पीढ़ियों का सुख-दुःख, तप व श्रम समाया हुआ है। उनका होना हमारे विश्वास और आत्मीयता को समृद्ध करता है। इस बहाने रमई काका अपनी परम्परा, मूल्य, विचार और संस्कृति को सहेजना और याद रखना भूलते नहीं हैं। 'हमारे दादा का खेतु आय, हमका कइसे न पियार होय' कविता में कहते हैं-

"पुरिखन को अडिग तपस्या ते खेतवा का कन-कन रीझा है।

उनहिन के रकत पसीना ते खेतवा का कन-कन सीझा है।।

पुरिखन के पलकन का पानी ई ढ्यालन बीच सँज्वावा है।

उनके तरवन कै धूरी हम ई खेतवा मइहाँ पावा है।।"[6]

रमई काका ने गँवई जीवन को न केवल जिया-भोगा वरन् उस गँवईपन की मिठास को अपनी कविता और कहन शैली में बखूबी उतारा भी है। उनकी कविताओं को पढ़ने पर पाठक खुद-बखुद गाँव के लोकजीवन की तरफ जुड़ता चला जाता है। गाँव की वह हर चीज उनकी कविता में मौजूद है जो एक खूबसूरत बिम्ब की सर्जना करती है। प्रातःकाल चिड़िया का प्रभाती के गीत गाना, किसान का उन गीतों को सुनाना। फिर खेतों की तरफ नये उम्मीद के साथ आगे बढ़ना, चिड़िया का किसान के साथ-साथ उसी तरह जाना जैसे बच्चे अपने पिता के साथ-साथ खेतों की तरफ जाते हैं। यह प्रकृति के साथ मनुष्य के रागात्मक व भावनात्मक संबंधों की निश्छल अभिव्यक्ति है। आज मनुष्य को इसी व्याकरण को समझने की जरूरत है। रमई काका 'गाँव है हमका बहुत पियार' कविता में कहते हैं-

"चिरइया सँग-सँग ख्यातै जायँ, घरै लउटतै बसेरा करैं।

प्रात परभाती चुटपुट चुपट, साँझ सँझवाती टेरा करैं।।"[7]

वर्षा ऋतु का आगमन परिवेश के सौन्दर्य में वृद्धि करता है। आसमान में जब बादलों का शामियाना तन जाता है। तब प्रकति का रंग जीवन के रूप में बरसता है-

"बदरियन कै साम्यामा-तरे, पुछारी नाचैं पंख पसारि।

मुरइला नयन बिछाय ठाढ़ि, बदरवा जीवनु दीन्हेनि वारि।"[8]

फिर यही बदरा धरती को हरा परिधान भेंट कर उसका शृंगार रचता है। पूरी धरा अपनी रंगत में रंग जाती है। रमई काका इस दृश्य को शब्दों में ढालकर उसे कविता का आवरण दे देते हैं-

"बदरवा दीन्हेनि हरियर चोट।

धरा के माँग बधूटिन भरी।।"[9]

किसान के घर-आँगन में उजियारा खलिहान में रखे अनाजों के ढेर से उत्पन्न होता है। यही उसकी समृद्धि और खुशहाली है जो उसकी आँखों में प्रसन्नता के भाव भर देते हैं-

"हँसा खरिहनवाँ अँबवा तरे,

किसनवाँ के घर माँ उजियार।

गाँव है हमका बहुत पियार।।[10]

'अन्न देवता' नामक कविता में रमई काका किसान के लिए खलिहान को किसी कोष से कम नहीं मानते हैं। किसान का असली सुख उसका समृद्ध व सम्पन्न खलिहान है। वे कहते हैं-

"निज भरा पुरा खरिहानु देखि।

होइगा किसान का गल-गल मन।"[11]

रमई काका किसान और उसकी उपज के प्रति गरिमा का भाव रखते हैं। अन्न को हमारी संस्कृति में देवता तुल्य माना गया है। इसी अन्न की कमी के कारण बंगाल के दुर्भिक्ष को याद करते हुए वे कहते हैं-

"वेई दानन के कारन ते,

भूखन मरिगा बंगाल देसु।

बसि अन्न देव की किरपा मा है

बहु हउसै हुलसनि कुलकनि।

है जहाँ कोपु तहँ है अकालु,

परलय झुलसनि हउकनि बिलखान।।"[12]

इसीलिए रमई काका गाँव से अगाध प्रेम करते हैं। रमई काका गाँव से दूर शहर में भले ही लम्बे समय तक नौकरी के सिलसिले में रहे हों पर मन के एक कोने में उनके गाँव हमेशा सुरक्षित व संरक्षित रहा है। उनकी कविताओं में उनके गाँव का पूरे रंग-रूप और सौन्दर्य के साथ आना इस बात की तसदीक करता है।

गाँव का लोकजीवन रमई काका ने सम्पूर्णता में अभिव्यक्त किया है। भारतीय परम्परा और संस्कृति में भोजन की पहली थाली अगरासन के रूप में गाय व अन्य पशु-पक्षियों को देने की रही है। तत्पश्चात् घर के सदस्यों द्वारा भोजन ग्रहण करने की रवायत रही है। दिन भर की थकान के बाद खेत से लौटे किसान को खिलाने के बाद ही पत्नी का भोजन ग्रहण करना दाम्पत्य जीवन की मधुरता का वितान रचती हैं। अपनत्व, समर्पण व प्यार गाँव की अपनी पूँजी है। जिसे सहेजना आज के दौर की सबसे बड़ी चुनौती है-

"मिलति गउवन का अगरासिनी, खाति हैं कुतवा पछिल ग्रास।

ख्याय ना जब तक खेतिहर कौरू, बहुरिया तब तक करै उपासु।।"[13]

रमई काका के काव्य की एक प्रधान प्रवृत्ति ग्राम्यांचल के सौन्दर्य एवं लोक संस्कृति का दिग्दर्शन कराना है। वे परिवेश से जीवन का संगीत और राग तलाश लेते हैं, जो सुखदायी प्रतीत होता है। 'झीसी-फाँफा-बूँदी' कविता में वे कहते हैं-

"नदियाँ मंगल धुनि छेड़ि दिहिनि, चंचली लहरियन के तारन

झरना नदियन का भेंटि रहे, जल के फुलवा भरि आँकवारन।

घर-घर किसान होइगे गल गल मन बिटवा थिरके झूमि झम।

आँगन मा लरिका कुलकि रहे, तुलसन कै गछिया घूमि घूमि।"[14]

रमई काका की काव्य दृष्टि चतुर्दिक है। लोकजीवन के हर कोने को उन्होंने संवेदनशीलता के साथ स्पर्श किया है। विषयवस्तु की वर्णन शैली में एक आभा प्रस्फुटित होती है। इस सन्दर्भ में पं0 रामनरेश त्रिपाठी का विचार है- " किसी विषय या वस्तु के वर्णन की जैसी क्षमता हम रमई काका में पाते हैं वैसी आधुनिक काव्य के और किसी कवि में दिखाई नहीं पड़ती है। वस्तुतः इनके वर्णन वैशिष्ट्यपूर्ण, वैदग्ध्यपूर्ण और अनछुई भंगिमाओं से अभिमंडित है।"[15]

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि रमई काका ग्राम्य संवेदना के कवि हैं। उनकी जड़ें गाँवों में हैं। उनकी आत्मा गाँव में बसती है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में प्रकृति के अनुपम रंगों का संयोजन है। गाँव-गिराँव का लोक जीवन व लोक संस्कृति अपनी सहजता और खूबसूरती के साथ उनकी कविताओं में बारंबार आता है। स्वयं किसान परिवार से ताल्लुक रखने के कारण वे कृषक एवं कृषि संस्कृति के व्याख्याता के रूप में जनमानस के

पटल पर उद्धृत हो जाते हैं। इनकी कविता का उद्गम स्थल गाँव ही है। जहाँ से उनकी काव्य यात्रा का शुभारम्भ होता है। अवधांचल और अवधी को एक समृद्ध सांस्कृतिक पहचान उनकी कविता दिलाने में अव्वल रही है। इसमें कोई सन्देह तनिक भी नहीं है। वह ग्राम्य संवेदना के एक कुशल शब्द शिल्पी ठहरते हैं। रमई काका की कविताएँ 'गँवई जीवन की मिठास और लोक जीवन से सम्पृक्त हैं।'

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अवध अवधी : विविध आयाम, पृ0सं0 382-385 तक (डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद शर्मा का लेख 'उन्नाव जनपद के प्रमुख रचनाकार)
2. डॉ0 महावीर प्रसाद उपाध्याय एवं डॉ0 रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर' आधुनिक अवधी काव्य, प्रकाशन केन्द्र लखनऊ, संस्करण 2012-13, पृ0सं0 150
3. वही, पृ0सं0-147
4. वही, पृ0सं0-152
5. वही, पृ0सं0-152
6. वही, पृ0सं0-151
7. वही, पृ0सं0-147
8. वही, पृ0सं0-148
9. वही, पृ0सं0-148
10. वही, पृ0सं0-149
11. आधुनिक अवधी काव्य, संपादन, पाठ्यक्रम समिति अवध विश्वविद्यालय अयोध्या, प्रकाशन केन्द्र लखनऊ, पृ0 सं0 57
12. वही, पृ0सं0- 59
13. डॉ0 महावीर प्रसाद उपाध्याय एवं डॉ0 रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर', आधुनिक अवधी काव्य, प्रकाशन केन्द्र लखनऊ, संस्करण 2012-13, पृ0सं0- 148
14. संपादन डॉ0 सूर्यप्रसाद दीक्षित एवं डॉ0 रामशंकर त्रिपाठी, अवधी काव्यधारा, अमित प्रकाशन लखनऊ, प्रथम संस्करण, 2008, पृ0सं0 155